ग्रामीण शिक्षित वयस्कों का जाति एवं जेंडर के मुद्दों पर मत

जैन बहादुर*
राजेश कुमार**

सामान्यतः शिक्षा को बदलाव के माध्यम के रूप में स्वीकार किया जाता है। जिसके माध्यम से लोगों में सोचने-समझने की 'विवेचनात्मक क्षमता' का विकास होता है। शिक्षा लोगों में समानता, लोकतंत्र और संवैधानिक मूल्यों को आत्मसात कराती है। शोधार्थी द्वारा गाँव में शिक्षा पर शोध अध्ययन इन्हीं मूल्यों की पड़ताल करने के लिए किया गया। इस शोध अध्ययन में यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया कि गाँव में शिक्षा प्राप्त वयस्क महिला और पुरुष, जाति एवं जेंडर को लेकर किस प्रकार की सोच रखते हैं? या उनके कार्य व्यवहार में जाति एवं जेंडर की क्या भूमिका होती है? इसलिए गाँव के कुछ लोगों से आँकड़ों का संकलन, साक्षात्कार और अवलोकन विधि से किया गया, जिसमें पाया गया कि जहाँ जाति और जेंडर को लेकर लोगों में परंपरागत रूप से चली आ रही रूढ़िवादी धारणाएँ टूट रही हैं, वहीं यह सतही भी नज़र आती है। जाति और जेंडर के आधार पर किए जाने वाले भेदभाव का तरीका भी बदल रहा है। इन्हीं सभी सरोकारों का उल्लेख इस शोध में दिया गया है।

व्यावहारिक तौर पर देखा जाए तो शिक्षा एक सीखने-सिखाने की प्रक्रिया है, लेकिन यह इसके लक्ष्यों, प्रक्रियाओं, कार्यों, अपेक्षाओं और वास्तविकताओं के संदर्भ में काफ़ी व्यापक और जटिल है। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* के अनुसार, "शिक्षा लोकतंत्र, समानता, न्याय, स्वतंत्रता, परोपकार, धर्म निरपेक्षता, मानवीय गरिमा व अधिकार तथा दूसरे के प्रति आदर जैसे मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता है।" शिक्षा राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक पहलुओं के संदर्भ में आलोचनात्मक होने का न केवल अवसर देती है, बल्कि सामाजिक मुद्दों की विविधता के प्रति लोकतांत्रिक स्वीकृति प्रदान करती है। डीवी (2009) शिक्षा को सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार समझने की कोशिश करते हैं। उनकी नज़र में समाज ही शिक्षा का ताना-बाना है। उनके अनुसार शिक्षा किसी भी सामाजिक व्यक्ति के रूप में सामाजिक समूह की प्राकृतिक और सामाजिक अनिवार्यता है। उनके अनुसार, "सारी शिक्षा सामाजिक चेतना में व्यक्ति के भाग लेने से पैदा होती है, यह प्रक्रिया अचेतन रूप से प्रायः जन्म से शुरू होती है और निरंतर व्यक्ति की शक्तियों को आकार प्रदान करती है, उसकी चेतना को सघन बनाती है, उसकी आदतों का निर्माण करती है, उसके विचारों को साधती है और उसकी अनुभूतियों तथा

* *शोधार्थी*, प्रौढ़ सतत शिक्षा एवं विस्तार विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 110007
** *प्रोफ़ेसर*, प्रौढ़ सतत शिक्षा एवं विस्तार विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 110007

© NCERT not to be republished

भावनाओं को उभारती है। इस अवचेतन शिक्षा द्वारा व्यक्ति धीरे-धीरे उन बौद्धिक और नैतिक संसाधनों में बंटने लगता है, जिन्हें मानव समाज एकत्र करने में सफल हुआ है।" डीवी शिक्षा के द्वारा लोगों में इस तरह की क्षमता को विकसित करना चाहते हैं कि लोग परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को समायोजित कर सकें। इसे वह सामाजिक कुशलता मानते हैं।

डॉ. अंबेडकर शिक्षा के मुद्दे को लेकर डीवी से प्रभावित थे, जिसे वह भारतीय परिस्थिति के अनुसार परिभाषित करते हैं। अंबेडकर ने समाज में हर व्यक्ति तथा समुदाय की सामाजिक एवं नैतिक प्रगति के लिए शिक्षा को परम आवश्यक तत्व माना है। उन्होंने इस बात पर बल दिया है कि अपने कष्टों को दूर करने तथा आर्थिक रूप से विकास करने के लिए समाज के हर वर्ग को शिक्षित होना चाहिए (जाधव, 2008)। समाज में व्याप्त असमानता को दूर करने में अंबेडकर शिक्षा को मुख्य साधन मानते हैं। इसके लिए वह सामजिक लोकतंत्र का समर्थन करते हैं। वह इस बात को समझते थे कि भारत में शिक्षा सभी लोगों तक पहुँचाना चुनौतीपूर्ण है। शिक्षा उस समाज से अलग-थलग होकर काम नहीं कर सकती जिसका वह भाग है। शिक्षा और समाज में व्याप्त सभी प्रकार के स्तरों की गतिविधियों से गहरा संबंध है, जो शिक्षा की समाजशास्त्रीय चुनौतियों को दर्शाता है।

बीसवीं शताब्दी में आलोचानात्मक शिक्षा के सिद्धांत और व्यवहार पर लिखने वालों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण और प्रभावकारी रचनाकारों में पाउलो फ्रेरे का नाम आता है। फ्रेरे के अनुसार जब तक व्यक्ति को सही और गलत का अहसास नहीं होगा, तब तक वह उसका विरोध नहीं कर सकता और ऐसा केवल शिक्षा द्वारा ही हो सकता है। उनके अनुसार हम जिस दुनिया में रहते हैं, शिक्षा उसे समझने में हमारी मदद करती है और हमें उसे बदलने के लिए बेहतर ढंग से तैयार करती है। लेकिन यह सब तभी संभव हो सकता है, जब हम शिक्षा को व्यापक स्तर पर प्रत्येक व्यक्ति एवं समूह से जोड़ पाएँगे। फ्रेरे ने ऐसे जुड़ाव के लिए एक नये ज्ञानशास्त्रीय दृष्टिकोण 'मुक्तकामी शिक्षा' को प्रस्तावित किया (निरंतर, 2011)।

इस प्रकार शिक्षा के महत्व को ध्यान में रखते हुए सबसे महत्वपूर्ण चुनौती सभी तक शिक्षा को पहुँचाने की रही है। समाज का एक बड़ा वयस्क तबका आज भी शिक्षा से दूर है, जिसकी विद्यालयी शिक्षा लेने की उम्र खत्म हो चुकी है। ऐसे लोगों तक शिक्षा की पहुँच को सुनिश्चित करने के लिए प्रौढ़ शिक्षा की शुरुआत की गई, जिसका उद्देश्य उन व्यक्तियों को शैक्षिक विकल्प प्रदान करना है, जो शुरुआती औपचारिक शिक्षा की आयु पार कर चुके हैं। इसके अंतर्गत साक्षरता, कौशल विकास (व्यावसायिक शिक्षा), आधारभूत शिक्षा जैसी अन्य ज्ञानपरक शिक्षा दी जाती है। इसके तहत 15 – 35 वर्ष की आयु के अशिक्षित वयस्कों को शिक्षा प्रदान की जाती है (एम.एच.आर.डी.)। ग्रामीण क्षेत्र में प्रौढ़ शिक्षा ने न केवल प्रौढ़ व्यक्तियों को साक्षर किया, बल्कि उनकी गतिशीलता में भी यह सहायक साबित हुई। प्रौढ़ शिक्षा के अंतर्गत अनेक कार्यक्रम शुरू किए गए, जिसमें सबसे प्रमुख 'राष्ट्रीय साक्षरता मिशन' है। इस कार्यक्रम की शुरुआत 1988 में हुई थी। इसके कुछ समय बाद 'समग्र साक्षरता अभियान' और 'उत्तर साक्षरता कार्यक्रम' का संचालन किया गया, जिसका उद्देश्य प्रकार्यात्मक क्षमता, सामाजिक चेतना का विकास

© NCERT not to be republished

और सतत शिक्षा को बढ़ावा देते हुए, सीखने योग्य समाज का निर्माण करना है।

इस कार्यक्रम के तहत राज्य स्तर से लेकर ग्रामीण स्तर तक विभिन्न प्रकार की स्थानीय संस्थाओं और गैर-सरकारी संस्थाओं की स्थापना की गई, जिसके प्रमुख घटक—राज्य संसाधन केंद्र, जन शिक्षण संस्थान, स्वैच्छिक एजेंसियाँ हैं। इन संस्थाओं की सहायता से ग्रामीण क्षेत्र में साक्षरता का विकास करने के लिए प्रौढ़ शिक्षा के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को लोगों तक पहुँचाया गया, जिसमें ब्लॉक स्तर से लेकर ग्राम पंचायत स्तर तक विभिन्न प्रकार के संसाधन केंद्रों की स्थापना की गई। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों एवं शिक्षा के अन्य कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्र में पुरुष की साक्षरता दर 78.16 प्रतिशत और महिला साक्षरता दर 58.8 प्रतिशत दर्ज की गई (जनगणना, 2011)।

शिक्षा और जाति

भारतीय समाज में जाति को दैवीय उत्पत्ति का आधार माना जाता है, जहाँ लोगों के काम का निर्धारण उनकी जाति के आधार पर होता है। अम्बेडकर का मानना था कि जाति के दो पहलू हैं—एक पहलू मनुष्यों को अलग-अलग समुदायों में बाँटता है तथा दूसरा पहलू, समाज का सीढ़ीदार ढाँचा बनाता है। समाज में प्रायः जिस जाति का दर्जा जितना अधिक ऊँचा होता है, उसके अधिकार उतने अधिक होते हैं और जिस जाति का दर्जा जितना नीचे होता है, उसके अधिकार उतने ही कम होते हैं। इस प्रकार जाति और उसके पेशे का निर्धारण परंपरागत तौर पर चला आ रहा है, जो सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक आधार पर वर्गीकृत है।

जाति प्रथा न केवल लोगों की सार्वजनिक भागीदारी को प्रभावित करती है, बल्कि एक-दूसरे के प्रति सोच-समझ को भी प्रभावित करती है। चक्रवर्ती (2011) के अनुसार, 'जाति प्रथा में ऊपर की ओर सत्ता और रुतबा बढ़ते जाते हैं जबकि नीचे की ओर घटते जाते हैं, इसका कारण, नीचे स्थित जातियाँ सत्ताहीन होने के साथ-साथ गंदी और प्रदूषक मानी जाती हैं।' ऐसी स्थिति में शिक्षा को बदलाव के माध्यम के रूप में देखा जाता है कि शिक्षा समाज में समानता का प्रसार करेगी और लोगों की सोच-समझ में परिवर्तन लाएगी। गाँधी (2011) की दृष्टि में शिक्षा काफ़ी व्यापक और विस्तृत है। वह शिक्षा के माध्यम से वर्गहीन, शोषणरहित और सहयोगी समाज की रचना करना चाहते थे। उनका मानना था कि सिर्फ़ राजनीतिक स्वतंत्रता ही हमारे लिए आवश्यक नहीं है, बल्कि हमें सामाजिक और आर्थिक समानता की भी ज़रूरत है ताकि लोगों के बीच किसी भी प्रकार का कोई भेदभाव न रहे। उनके अनुसार 'बुनियादी तालीम' एक मूक सामाजिक क्रांति का अग्रदूत है... 'इससे हमारे गाँवों की बढ़ती हुई अवनति रुकेगी तथा एक न्यायसंगत सामाजिक संरचना की नींव पड़ेगी तथा यह सब कार्य विभिन्न वर्गों के रक्त रंजित संघर्ष के बिना ही हो जाएगा। इस प्रकार शिक्षा को जातिगत भेदभाव में बदलाव का माध्यम के रूप में देखा जाता है। प्रत्येक समाज में शिक्षा तक सबकी पहुँच चुनौतीपूर्ण रही है, जिसे द्रेज एवं सेन (2018) आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति में बाधक मानते हैं। वे शिक्षा को व्यक्ति की क्षमता विकास से जुड़ा मामला मानते हैं। उनकी दृष्टि में शिक्षा की जितनी प्रगति विकास के लिए महत्वपूर्ण है, उतनी ही सामाजिक समरसता के लिए भी आवश्यक है।

© NCERT not to be republished

जेंडर और शिक्षा

समाज में शिक्षा को हमेशा से विकास के मुख्य द्वार के रूप में देखा गया है। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति कार्य करने की क्षमता, समाज के लिए उपयोगी नागरिक और वैयक्तिक उन्नयन हासिल करता है। समाज में जहाँ शिक्षा को प्रगति और समरसता के लिए आवश्यक माना जाता है, ऐसे में समाज के अधिकांश तबके को इससे वंचित रखकर समाज को सशक्त नहीं बनाया जा सकता। सामान्यतः शिक्षा तक बहुतायत पहुँच पुरुषों की पाई जाती है, जबकि महिलाओं के साथ ऐसा नहीं है। पुरुषों की तरह महिलाओं को भी शिक्षा की गतिविधियों में भाग लेने का अवसर मिलना चाहिए। महिलाओं की शिक्षा तक पहुँच चुनौतीपूर्ण होने के कारणों में से कुछ कारण, जेंडर रूढ़िवादिता और पुरुषवाद हैं। जेंडर, शिक्षा के बदलाव का आधार है जिसके लिए सबसे ज़रूरी है कि शिक्षा तक विशेषकर लड़कियों की पहुँच हो। "यदि स्त्री-पुरुष समता के सवाल पर भारत के संविधान में शामिल कानूनी बराबरी का ज़िक्र, एक आम बात की तरह किया जाने लगा है तो इसका अर्थ लगाना जल्दबाज़ी होगी कि इस विचार पर हमारे समाज में आम सहमति बन गई है। यदि कुछ सहमति दिखाई भी देती है तो उसका आधार सोच-समझ में कम और बात करने के आम तरीके में अधिक दिखाई देता है" (कुमार, 2014)। महिला-पुरुष समानता अधिकांशतः कागज़ी दस्तावेज़ों और आदर्शवादी विचारों में अधिक पाया जाता है, जबकि धरातल पर कम दिखाई देता है।

महिला शिक्षा को बढ़ावा देने में नारीवादी विचारधारा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है जिसने न केवल शिक्षा, बल्कि महिलाओं के अधिकारों एवं जागरूकता को लेकर भी कार्य किया। नारी दृष्टि सिद्धांत कहता है कि अन्य उत्पीड़ित समूहों की तरह महिलाओं की सामाजिक स्थिति न सिर्फ़ महिलाओं के खुद के ज्ञान के स्रोत हैं, बल्कि वह शेष प्रकृति और सामाजिक संबंधों के ज्ञान के स्रोत भी हैं। यह ज्ञान सामाजिक स्थिति में रचे गए ज्ञान से आगे बढ़कर एक अत्यंत महत्वपूर्ण जाग्रति पैदा करता है कि कैसे सामाजिक स्थिति को जानने के तौर-तरीकों या जानने को प्रभावित करती है (निरंतर, 2011)।

गाँव की अवधारणा

गाँव अपने आप में विविधताओं को सँजोए हुए है, जो एक राज्य से दूसरे राज्य तथा एक ज़िले से दूसरे ज़िले में भौगोलिक, आर्थिक, ऐतिहासिक, नृजातीय संबंधी तथा अन्य विशेषताओं के कारण विभिन्नता रखता है। दुबे (2010) का मानना है कि गाँवों की सामाजिक संरचना तथा उनकी समस्याओं को ठीक से समझने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें स्पष्टतः वर्गीकृत किया जाए। ऐसे वर्गीकरण के लिए कई सारी कसौटियाँ हो सकती हैं, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं—

1. आकार, जनसंख्या तथा भूमि क्षेत्रफल
2. नृजातीय समूह एवं जनजातियाँ
3. भू-स्वामित्व का स्वरूप
4. सत्ता की संरचना और अधिकार उत्क्रम
5. एकाकीपन की मात्रा
6. स्थानीय परम्पराएँ

दुबे (2010) भारतीय गाँवों की समझ को उपरोक्त फ्रेमवर्क के आधार पर समझने की सलाह देते हैं। उनका मानना है कि भारत की प्रत्येक संस्कृति में आकार और जनसंख्या के आधार पर प्रदेश और गाँवों का वर्गीकरण किया जाता है, जिनकी पहचान

© NCERT not to be republished

दूसरे क्षेत्र से अलग होती है। इनके प्रभाव और प्रतिष्ठा की मात्रा की दृष्टि से इनमें बहुत अंतर पाया जाता है। इन सबको एक श्रेणी में रखने का अभिप्राय महत्वपूर्ण समाजशास्त्रीय तथ्यों की अवहेलना करना भी है। गाँवों में पाए जाने वाले अंतर का एकमात्र कारण नगरीकरण, औद्योगिकीकरण और पश्चिमीकरण की शक्तियों के आधार पर नहीं किया जा सकता है। हर गाँव की जीवन पद्धति कुछ हद तक दूसरे से अलग होती है। आस-पास बसे गाँवों में काफ़ी अंतर होता है।

गाँवों में लोग कृषि कार्य में लगे रहते हुए अपनी ज़रूरत की चीज़ों का उत्पादन स्वयं करते हैं जो उनकी एकता को दर्शाता है। लेकिन श्रीनिवास (2011) गाँव में जाति की संरचना को महत्वपूर्ण कारक मानते हैं, उनके अनुसार जाति आज भी एक प्रबल संस्थान है, दूसरे जाति वाले से रोटी-बेटी के संबंध वर्जित होने के कारण किसी गाँव में रहने वाले एक जाति के लोग, कई महत्वपूर्ण बंधनों से दूसरे गाँवों में रहने वाले अपने सजातियों से बँधे होते हैं। यह बंधन इतने मज़बूत हैं कि कुछ नृवंशीशास्त्रीय यह दावा करते हैं कि गाँव की एकता मिथक मात्र है और जाति ही सर्वोच्च है। वे आस-पास के गाँवों से आर्थिक, धार्मिक और सामाजिक संबंधों के माध्यम से गहराई से जुड़े हैं।

गाँव की अवधारणा को किसी एक पहलू के आधार पर नहीं समझा जा सकता है। गाँवों की संस्कृति, जातिगत संबंध, भौगोलिक संरचना जैसे अन्य कई पक्षों के आधार पर गाँव को समझा जा सकता है। गाँव की समझ वहाँ के वातावरण में होने वाली सामाजिक घटनाओं और सामाजिक संबंधों के अध्ययन के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। ऐसी स्थिति में गाँव में शिक्षा की क्या भूमिका होगी? यह एक शोध का विषय है कि जहाँ जेंडर, जातिगत जैसी अन्य असमानताएँ विद्यमान हैं, वहाँ शिक्षा कितनी असरदार साबित होगी।

शोध औचित्य

शिक्षा पढ़ने-लिखने की योग्यता प्राप्त करने की प्रक्रिया से कहीं अधिक है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिससे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक ताने-बाने को समझने में मदद मिलती है। यह हमारी मौजूदा पहचान को समझते हुए, इसकी निर्मिति एवं रोज़मर्रा के जीवन को समझने में मदद करती है।

अतः कहा जा सकता है कि शिक्षा, समाज में परिवर्तन का मुख्य साधन एवं कारण है जिसके द्वारा समाज में न केवल विकास होता है, बल्कि समानता, स्वतंत्रता और भाई-चारे की भावना का विकास होता है। शिक्षा द्वारा समाज में अवसर की समानता का माहौल निर्मित किया जाता है ताकि समाज के विभिन्न तबके के लोगों की हर क्षेत्र में समान भागीदारी हो सके।

शिक्षा को 'मुक्तकामी', व्यक्ति की 'क्षमता का विकास', 'समतामूलक' समाज का विकास करने वाली जैसे रूपों में व्याख्यायित किया गया है। इस शोध पत्र में शिक्षा को समाज में बदलाव लाने के माध्यम के रूप में समझाया गया है। इसमें बताया गया है कि असमानता के पश्चात् भी भारतीय समाज में शिक्षा कहाँ तक कारगर साबित हो रही है, जिसका अध्ययन गाँव में जाति और जेंडर के संदर्भ में किया गया है।

उद्देश्य

- गाँव में शिक्षा और जाति के अंतर्संबंधों को ज्ञात करना।
- गाँव में शिक्षा और जेंडर के अंतर्संबंधों को ज्ञात करना।

© NCERT not to be republished

शोध प्रविधि

शोधार्थी द्वारा शोध की गुणात्मक प्रकृति एवं उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए वर्णात्मक एवं विश्लेषणात्मक अनुसंधान पद्धति का उपयोग किया गया। शोध उपकरण के रूप में अर्द्धसंरचनात्मक और अवलोकन विधि का प्रयोग किया गया था। शोध क्षेत्र के लिए उत्तर प्रदेश के जौनपुर ज़िले के मीरपुर (बदला हुआ नाम) गाँव को लिया गया था, जहाँ की जनसंख्या 1195 है, परिवार 192, लिंगानुपात 108, साक्षरता दर 74.65, पुरुष साक्षरता दर 86.35, महिला साक्षरता दर 63.67 थी (जनगणना, 2011)। इस गाँव में अहीर, नाई, ब्राह्मण, मौर्या, चौहान, मुस्लिम, चमार, ठाकुर, प्रजापति, समुदाय के लोग निवास करते हैं। इस गाँव में उच्च जाति की संख्या कम है, पिछड़ी जातियों की संख्या अधिक है, जिसमें अहीर (यादव) सबसे प्रभावशाली जाति है।

शोधार्थी द्वारा यादृच्छिक और उद्देश्यपरक तरीके से कुल 50 प्रतिदर्श का चयन किया गया था, जिसमें 25 पुरुष और 25 महिलाएँ हैं। शोधार्थी द्वारा उन्हीं प्रतिदर्श का चयन किया गया, जिन्होंने कम से कम अपनी स्कूल की पढ़ाई कक्षा बारहवीं तक पूरी की थी अर्थात् जिनकी आयु 18 साल से अधिक थी। शोध अध्ययन में सामाजिक क्षेत्र के अंतर्गत जातिगत और जेंडर मुद्दों को शामिल किया गया था। शोध अध्ययन में शिक्षा को व्यावहारिक जीवन में जानने की कोशिश की गई।

विश्लेषण एवं विवेचन

इस शोध में शोधार्थी द्वारा प्रतिदर्श से जाति और जेंडर से संबंधित सामाजिक मुद्दों पर आँकड़ों का संकलन किया गया। इसमें व्यावहारिक जीवन में जाति एवं जेंडर से जुड़े पहलुओं को शामिल किया गया था। तालिका 1 में जाति और जेंडर की समानता को लेकर पूछे गए सवालों को सहमत और असहमत में श्रेणीबद्ध करके उत्तरदाता की संख्या एवं उनके प्रतिशत का निर्धारण करते हुए विश्लेषण एवं विवेचन किया गया है।

तालिका 1 के तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि लोगों की सामाजिक स्थिति और आचार-विचार के विकास में शिक्षा की भूमिका काफ़ी मध्यम दर्जे की समझी गई। सामान्यत: लोगों का मानना है कि शिक्षा से समाज में बदलाव होता है। इससे लोगों के व्यक्तित्व का विकास होता है। 74 प्रतिशत लोगों का मानना है कि जाति को लेकर लोगों में भेदभाव कम हुए हैं, जबकि 26 प्रतिशत लोगों का मानना है कि समाज में अभी जातिगत भेदभाव किए जाते हैं। उसमें भी पुरुषों में 80 प्रतिशत लोगों का मानना है कि जातिगत भेदभाव कम हुए हैं, जबकि 20 प्रतिशत पुरुषों के अनुसार जातिगत

तालिका 1 — जाति व जेंडर समानता पर पुरुष एवं महिला प्रतिदर्शों के मत

शिक्षा द्वारा सकारात्मक सुधार	पुरुष (25)				महिला (25)				कुल	
	सहमत	*प्रतिशत*	*असहमत*	*प्रतिशत*	*सहमत*	*प्रतिशत*	*असहमत*	*प्रतिशत*	*सहमत*	*असहमत*
जेंडर समानता	18	72%	07	28%	15	60%	10	40%	66%	34%
जातिगत समानता	20	80%	05	20%	17	68%	08	32%	74%	26%

© NCERT not to be republished

भेदभाव अभी भी होता है। इसी तरह महिलाओं में 68 प्रतिशत महिलाओं के अनुसार जातिगत भेदभाव कम हुए हैं, जबकि 32 प्रतिशत महिलाओं के अनुसार जातिगत भेदभाव होता है। इनके अनुसार समाज में जातिगत मुद्दे कहने को आदर्शवादी नज़रिए से कम हुए हैं, लेकिन वास्तविकता कुछ और नज़र आती है। कोई निम्न जाति का व्यक्ति किसी उच्च जाति के व्यक्ति के घर जाकर उसके बर्तन में नहीं खा सकता है, जाति को लेकर लोगों में केवल सतही परिवर्तन हुए हैं। जब कोई मुद्दा या हित टकराता है तो लोग जाति देखने लगते हैं। उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगों की बस्ती में जाते हैं, लेकिन उनके घरों में खान-पान नहीं करते हैं, अपेक्षाकृत उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगों से अपनी माँग को मनवाने के लिए दमन और वर्चस्वशाली जातीय हिंसा का इस्तेमाल करते हैं। "वर्चस्व का आधार संपत्ति अथवा भूमि पर अधिकार और नियन्त्रण है, जो राजनीतिक सत्ता भी उपलब्ध कराता है (चक्रवर्ती, 2011)। निम्न जाति के लोगों से जब सीधे तौर पर पूछा गया कि, "क्या जातिगत भेदभाव समाप्त हो रहा है?" तो उनका तुरंत उत्तर आता है कि, "हाँ, समाप्त हो रहा है।" जबकि उसी निम्न जाति में लोगों से जातिगत भेदभाव से संबंधित प्रश्नों को गहराई से पूछा गया तो जातिगत भेदभाव पाया गया। जिसमें कुछ लोगों ने कहा है कि, "किसी अपने से उच्च जाति के यहाँ काम करने जाते/जाती हैं तो उनके साथ खाने के बर्तन से लेकर खाद्य पदार्थ और व्यवहार में भी भेदभाव किया जाता है।" समाज में शिक्षा को लेकर लोगों द्वारा स्वीकृति मिल चुकी है, लेकिन शिक्षा अपने उद्देश्यों में पूर्णतः सफल नज़र नहीं आती है। लोगों की मानसिकता को बदलने में सफल नहीं हो पा रही है। इन अर्थों में देखें तो शिक्षा वर्तमान में अपने ऊपर प्रश्न चिह्न लगाती हुई प्रतीत होती है। क्योंकि लोकतांत्रिक एवं समतामूलक समाज अपने भीतर ही एक विभेदनकारी तंत्र का लगातार निर्माण किए जा रहा है और इसमें शिक्षा आश्चर्यजनक रूप से मौन है, शिक्षा की यह चुप्पी एक असाधारण एवं विस्मयकारी स्वरूप में मौन है, जिसके कारणों की पड़ताल वर्तमान में गैर-वैकल्पिक, नैसर्गिक तथा अपरिहार्य दिखती है (शर्मा, 2007)। पढ़े-लिखे युवा वर्ग में जातिगत भेदभाव को लेकर सार्वजनिक सतही परिवर्तन हुआ है। इसका मतलब यह है कि चौराहे, सभाओं में उच्च जाति एवं निम्न जाति के लोग एकसाथ उठते-बैठते हैं, अपने विचारों को साझा करते हैं, लेकिन जैसे ही कोई व्यक्तिगत मुद्दा आता है तो वहाँ जातिगत श्रेष्ठता हावी होने लगती है। ऐसी स्थिति जातीय वर्ग (पिछड़ी जातियों में आने वाली विभिन्न जातियों, जैसे—यादव, मौर्या, प्रजापति, चौहान इत्यादि) के अंतर्गत आने वाली जातियों में भी पाई गई।

जेंडर को लेकर लोगों में रूढ़िवादी सोच-समझ कमज़ोर हो रही है। लड़कियों की शिक्षा के प्रति गाँव के लोग जागरूक हुए हैं। 66 प्रतिशत लोगों का मानना है कि अब लड़के-लड़कियों में समानता का व्यवहार किया जाता है, जबकि 34 प्रतिशत लोगों का मानना है कि लड़के-लड़कियों में भेदभाव किया जाता है और कहीं-न-कहीं किया भी जाना चाहिए। इसमें भी 72 प्रतिशत पुरुष जेंडर समानता से समहत हैं। 28 प्रतिशत पुरुष जेंडर समानता से सहमत नहीं हैं। जबकि 60 प्रतिशत महिलाएँ जेंडर समानता से सहमत हैं और 40 प्रतिशत महिलाएँ जेंडर समानता से असहमत हैं। "अब लोग लड़कियों को भी

© NCERT not to be republished

पढ़ने-लिखने के लिए घर से या गाँव से बाहर भेजते हैं, लेकिन सिर्फ़ शिक्षा के लिए ही, बाकि किसी काम के लिए बाज़ार या चौराहे तक नहीं जाने देते हैं। लेकिन अब धीरे-धीरे सुधार हो रहा है, लड़कियाँ बाहर निकल रही हैं, शहरों में जा रही हैं, भले ही शिक्षा के लिए। लड़कियाँ भी अच्छा काम कर रही हैं बशर्ते उनको अवसर दिया जाए। अभी हाल ही में टीना डाबी ने भारतीय प्रशासनिक सेवाएँ (आई.ए.एस.) परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया है। हमारी ग्राम प्रधान भी महिला है, तो अब जेंडर को लेकर सुधार हो रहा है, लेकिन काफ़ी धीमी गति से।" कुछ महिलाओं का मानना था कि, "लड़कियों को शादी के लिए पढ़ाते हैं। जब तक उनकी शादी नहीं हुई होती है, तब तक उनको पढ़ाते हैं। उसके बाद की पढ़ाई उसके ससुराल वालों पर निर्भर करती है। जबकि लड़कों पर इस तरह का कोई प्रतिबंध नहीं रहता है।"

समाज में लड़कियों को एक ज़िम्मेदारी के रूप में देखा जाता है, "जो अच्छे अभिभावक होते हैं वे अपने घर की लड़कियों पर निगरानी करते हैं।" उनका मानना है कि लड़कियों पर इस तरह की निगरानी और प्रतिबद्धताएँ उनके समाजीकरण का हिस्सा होती हैं जो उन्हें एक लड़की/महिला के रूप में निर्मित करती हैं। दूबे (2004) ने भी बताया है कि लड़कियों की समाजीकरण की प्रक्रिया में इस बात पर बल दिया जाता है कि परिवार की इच्छाओं के समक्ष उसे झुकना पड़ सकता है तथा विनम्रता और आज्ञाकारिता नारी के आदर्श हैं। इस प्रकार जेंडर समानता को लेकर शोधार्थी द्वारा अध्ययन में कई तरह के अंतर्द्वंद्व दिखे जो एक प्रकार से कुछ सुधारात्मक हैं, लेकिन सतही हैं। महिला शिक्षा और समानता को लेकर अभी भी पूर्वाग्रह पाया गया है, जबकि महिला शिक्षा के महत्व को लेकर विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49) ने भी चर्चा करते हुए शिक्षित महिला को "एक श्रेष्ठ शिक्षक" माना, जो एक सुव्यवस्थित परिवार और सुव्यवस्थित पुरुष को बनाने में मदद करती है।

निष्कर्ष

शोधार्थी द्वारा चयनित गाँव में शिक्षा का अध्ययन जाति और जेंडर के संदर्भ में किया गया। जहाँ कई तरह के अंतर्द्वंद्व पाए गए। शिक्षा समाज में परिवर्तन लाती है। जहाँ लोगों में परंपरागत तरीके से चली आ रही सामाजिक रूढ़ियाँ टूट रही हैं, वहीं दूसरी तरफ़ ये सतही भी नज़र आ रही हैं। शिक्षा ने जातिगत भेदभाव के वीभत्स रूप को समाप्त किया है। उपरोक्त आँकड़ा बता रहा है कि अधिकांश लोगों में जातिगत भेदभाव कम हुए हैं, लेकिन इसका यह भी मतलब नहीं निकाला जाना चाहिए कि जातिगत भेदभाव खत्म हो गए हैं। ऐसे लोगों की भी संख्या पाई गई जिनके अनुसार जातिगत भेदभाव अभी समाज में विद्यमान हैं। पुरुषों की तुलना में महिलाओं में जातिगत भेदभाव में विश्वास अधिक पाया गया। इससे पता चलता है कि शिक्षा द्वारा लोकतांत्रिक, समतामूलक मूल्यों का विकास महिलाओं में पुरुषों की तुलना में कम हुआ है। इसका एक पहलू गाँव में महिलाओं के सार्वजनिक स्थानों पर भागीदारी पर प्रतिबंध है। वह अपने विचारों को साझा नहीं कर पातीं। इससे उनके शैक्षिक मूल्यों का अनुप्रयोग नहीं हो पाता है, एक तरह से वे अपने पारिवारिक दबाव और जातिगत रूढ़िवादी परंपराओं से निकल नहीं पाती हैं। कभी किसी निम्न जाति के व्यक्ति के घर आने पर महिलाएँ जातिगत संदर्भ में

© NCERT not to be republished

उसके साथ वैसा ही व्यवहार करती हैं, जैसा परिवार के पुरुष करते हैं। ऐसी स्थिति में उस शिक्षा प्राप्त महिला का खुद का व्यवहार करने का निर्णय कम पाया गया, जिसे जातिगत और पुरुषवाद विचारधारा के सूक्ष्म स्तरीय व्यापकता के रूप में देखा जाना चाहिए। शिक्षा के बावजूद भी जाति को लेकर पुरुषों और महिलाओं की मानसिकता में अभी बहुत सकारात्मक बदलाव नहीं पाया गया।

इस प्रकार जातिगत भेदभाव अभी भी समाज में व्याप्त है, बशर्ते इस भेदभाव को करने के तरीके में परिवर्तन हो गया है। निष्कर्षस्वरूप शोधार्थी ने पाया कि पहले प्रत्यक्ष रूप से हर कोई जातिगत भेदभाव करता था, लेकिन अब अप्रत्यक्ष रूप से जातिगत भेदभाव होता है। सार्वजनिक जगहों पर लोग मेलजोल के साथ उठते-बैठते दिखते हैं। लेकिन जब व्यक्तिगत स्वार्थ आता है तो लोग जाति देखने लगते हैं। जातिगत शब्दों का इस्तेमाल भी अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। निम्न जाति के लोगों की क्षमता को उच्च जाति की तुलना में हमेशा कम आँका जाता है। जाति के परंपरागत मूल्यों में लोग विश्वास करते हैं। जातिगत भेदभाव का राजनीतिक पक्ष भी गाँव में देखने, सुनने को मिला, जिसका उपयोग वोट लेने के लिए भी किया जाता है। स्थानीय स्तर की राजनीतिक गतिविधियों में लिप्त रहने वाले लोग निम्न जाति के लोगों के साथ समानता का व्यवहार करते हैं ताकि उनका वोट लिया जा सके।

गाँव में शिक्षा से जेंडर समानता का मार्ग प्रशस्त हुआ है। जहाँ पहले महिला शिक्षा को लेकर लोग बहुत कम सोचते थे, वहीं अब लड़कियों की शिक्षा को लेकर लोग सचेत रहने लगे हैं। जोकि एक सकारात्मक परिवर्तन है। उपरोक्त आँकड़ों के अनुसार लड़के-लड़कियों को लेकर अधिकांश लोगों में समानता का व्यवहार पाया गया। लेकिन यह समानता आम बोलचाल में अधिक पाई गई। ऐसे लोगों की संख्या भी गाँव में है जो इस तरह की समानता से सहमत नहीं है। जिसमें महिलाओं की संख्या पुरुषों की तुलना में अधिक है। इस तरह की समानता ज़्यादातर शिक्षा के क्षेत्र में नज़र आई, जहाँ लोग लड़कों के साथ लड़कियों को पढ़ाने के लिए सहमत हैं। शिक्षा के आलावा बाकी किसी तरह के सार्वजनिक क्षेत्र में लड़कियों की भागीदारी को लेकर लोग असहमत होते पाए गए और जेंडर रूढ़िवादिता का हवाला देने लगते हैं। ऐसे महिला, पुरुष कम पाए गए जो किसी सफल महिला का उदाहरण देते हुए महिलाओं की समान भागीदारी की बात करते हों। लड़कियों की शिक्षा और समानता के पीछे कई तरह के कारण भी नज़र आते हैं, जिसमें से एक कारण शादी भी है। अगर लड़कियों को नहीं पढ़ाया जाएगा तो उनकी शादी में समस्या आ जाएगी। शादी के पश्चात् उनकी शिक्षा को लेकर उनके घरवालों में उतनी उत्सुकता नहीं रहती है, जितनी शादी से पहले। लड़कियों को शिक्षा शादी और जागरूकता, दोनों आधार पर प्रदान की जा रही है। जहाँ शादी के लिए दी जा रही शिक्षा परिवार अपनी मजबूरी समझता है, वहीं जागरूकता के आधार पर प्रदान की जा रही महिला शिक्षा एक जेंडर समानता जैसे सकारात्मक बदलाव को दर्शाता है। इस बदलाव का दूसरा पक्ष यह भी है कि जिस तरह से लड़कों को आज़ादी रहती है, उस तरह से लड़कियों को नहीं रहती है। लड़कों की शिक्षा को लेकर लोगों में जितनी तत्परता पाई गई उतनी लड़कियों की शिक्षा को लेकर नहीं। लड़कियों को एक उम्र के बाद गाँव में पड़ोसी के घर भी जाने पर पाबंदी रहती है। शिक्षा

© NCERT not to be republished

के अलावा बाकी दूसरी तरह के चीज़ों के उपयोग को लेकर महिलाओं या लड़कियों उन चीज़ों के पर एक तरह का प्रतिबंध रहता है। अगर उपयोग की स्वतंत्रता रहती भी है तो उसके साथ प्रतिबद्धताएँ भी जुड़ी रहती हैं, जैसे—सोशल मीडिया के उपयोग को लेकर भी उन पर सामाजिक, पारिवारिक रूढ़िवादी नैतिकताओं का दबाव रहता है कि इसके उपयोग से वे बाहरी पुरुषों या दूसरे लोगों के संपर्क में आ सकती हैं जो किसी महिला या लड़की के लिए अच्छी बात नहीं है। एक तरह से महिलाओं को घर-परिवार की इज़्ज़त के रूप में देखा जाता है अर्थात् महिला या लड़की जितनी सीमाबद्ध तरीके से रहेगी, उसको उतनी ही सुशील और अच्छी महिला माना जाएगा। इस तरह उन्हें शिक्षा तो प्रदान की जा रही है, लेकिन इसके साथ उन्हें परंपरागत रूप से चली आ रही महिला के रूप में ही रहने की उम्मीद की जाती है। घर-परिवार में कोई निर्णय लेने में ज़रूरी नहीं रहता है कि महिलाओं से भी सलाह ली जाए। ऐसी स्थिति में उन महिलाओं को तवज्जों दी जाती है जो पढ़ी-लिखी होने के साथ किसी नौकरी/पेशे से जुड़ी हों। इस तरह यहाँ महिलाओं में ही शिक्षित और अशिक्षित महिला में भेदभाव पाया गया, जबकि पुरुषों में ऐसा नहीं है। अगर पुरुष अशिक्षित है और कोई नौकरी भी नहीं कर रहा है, फिर भी उसके निर्णय को तवज्जों दी जाती है। इस तरह उनकी सार्वजनिक भागीदारी पुरुषों की तुलना में कम ही रहती है। इस प्रकार से शिक्षा द्वारा जेंडर समानता की पहल हुई है, लेकिन शिक्षा के लिए लड़कियों को घर से बाहर निकलने या दूसरी तरह भागीदारी के आधार पर पूर्णतया जेंडर समानता की बात करना गलत होगा, क्योंकि जिस तरह की भी थोड़ी बहुत आज़ादी उन्हें मिली है, वह पुरुषवाद से ग्रसित है।

शैक्षिक निहितार्थ

शिक्षा और समाज के बीच गहरा संबंध है। यह संबंध एक-दूसरे को प्रभावित करता है, जिसमें शिक्षा से यह उम्मीद की जाती है कि वह समाज का रूपांतरण करेगी और एक समतामूलक, लोकतांत्रिक समाज का निर्माण होगा। गाँव में जाति और जेंडर से संबंधित मामला काफ़ी जटिल होता है। शिक्षा के अंतर्संबंध को समझने में यह शोध सहायक साबित होगा। ग्रामीण क्षेत्र में जाति और जेंडर के उन गूढ़ पहलुओं को समझा जाएगा जिससे शिक्षा सिर्फ़ सतही परिवर्तन ला रही है। इसके साथ ही उन कारणों को भी समझा जाएगा जिसके कारण शिक्षा ग्रामीण क्षेत्र में जाति और जेंडर की आधारभूत संरचना में सकारात्मक बदलाव नहीं ला पा रही है। इन सब समस्याओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा में जाति एवं जेंडर से जुड़े संवेदनशील मुद्दे को प्रमुखता से शामिल किए जाने की ज़रूरत है, जो व्यापक शिक्षाई विमर्श से जुड़ा हो ताकि लोगों में समानता और जागरूकता का विकास किया जा सके और लोग इस बात को समझ सकें कि बेहतर समाज का निर्माण महिला और पुरुष की समान भागीदारी से ही हो सकता है। महिला और पुरुष, दोनों का ही समाज में महत्व है, इसलिए आवश्यक है कि दोनों को समान रूप से शिक्षा प्रदान की जाए। समाज में जाति और जेंडर से संबंधित रूढ़िवादी मान्यताओं को समझते हुए इसके प्रति लोगों में आलोचनात्मक सोच और जागरूकता का विकास किया जाए। शिक्षा के द्वारा ही लोगों में समानतामूलक, लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास किया जा सकता है।

© NCERT not to be republished

संदर्भ

कुमार, कृष्ण. 2014. *चूड़ी बाज़ार में लड़की*. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली.

गाँधी, महात्मा. 2011. *मेरे सपनों का भारत*. नवजीवन ट्रस्ट, गुजरात.

घोष, मालिनी. 2011. साक्षरता, सत्ता और नारीवाद. *जेंडर और शिक्षा रीडर,* भाग 2. निरंतर, दिल्ली.

चक्रवर्ती, उमा. 2011. *जाति समाज में पितृसत्ता*. ग्रन्थ शिल्पी प्रकाशन, दिल्ली.

जाधव, नरेंद्र. 2008. *डॉ. अंबेडकर सामाजिक विचार एवं दर्शन*. प्रभात प्रकाशन, दिल्ली.

डीवी, जॉन. 2009. *शिक्षा और समाज*. आकार पब्लिकेशन, दिल्ली.

दुबे, श्यामाचरण. 2010. *भारतीय ग्राम*. वाणी प्रकाशन, दिल्ली.

दूबे, लीला. 2004. *लिंगभाव का मानव वैज्ञानिक अन्वेषण — प्रतिच्छेदी क्षेत्र*. वाणी प्रकाशन, दिल्ली.

निरंतर. 2011. नारीदृष्टि सिद्धांत. *जेंडर और शिक्षा रीडर, भाग 2*. निरंतर, दिल्ली.

——. 2011. *जेंडर और शिक्षा रीडर,* भाग 2. निरंतर, दिल्ली.

भारत सरकार. 2011. *जनगणना, 2011*. ऑफिस ऑफ़ द रजिस्ट्रार जनरल एंड सेन्सस कमिश्नर. गृह मंत्रालय, भारत सरकार.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*. रा.शै.अ.प्र.प., नयी दिल्ली.

शर्मा, संजय. 2007. *सामाजिक गतिशीलता और शिक्षा — शैक्षिक संदर्भ में वाल्मीकि समुदाय का अध्ययन*. शिक्षा संकाय, अप्रकाशित शोध प्रबंध. दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली.

श्रीनिवास, एम. एन. 2011. *भारत के गाँव*. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली.

सेन, द्रेज, अमर्त्य ज्याँ. 2018. *भारत और उसके विरोधाभास*. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली.

© NCERT not to be republished